Dr. RANJEET KUMAR
Deptt. of History
H. D. Jain College, Ara.

Notes For- M.A. Sem-III, CC-13, Unit-IV

Topic - 1935 ई० का भारतीय परिषद अधिनियम :-

"भारत शासन अधिनियम' 1935, भारत में ब्रिटिश द्वारा संवैधानिक निर्माण की प्रक्रिया का लगभग अंतिम प्रक्रिया था। इस अधिनियम का महत्व कई दृष्टियों से था। एक तो इसने भारतीयों को पहली बार प्रशासकीय अनुभव दिए। दूसरे भारतीय संविधान के निर्माण में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही, और संविधान लागू होने तक इस अधिनियम के प्रावधानों से ही भारत का शासन चलता रहा (1950 तक)।

1935 के अधिनियम द्वारा जिस शासन प्रणाली की व्यवस्था की गई थी उसके मुख्य लक्षण निम्नलिखित थे :—

(1) परिसंघ और स्वायत्तता :- (i) इसके पहले के भारत शासन अधिनियम में भारत सरकार ऐकिक थी। किंतु 1935 के अधिनियम में परिसंघ की स्थापना की गई। जिसमें इकाइयां थी प्रांत और देशी रियासतें।

(ii) देशी रियासतों के लिए परिसंघ में सम्मिलित होने का विकल्प था

(iii) गवर्नर, सम्राट की ओर से प्रांत की कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग करता था। वह वायसराय के अधीन नहीं था।

(iv) गवर्नर से यह अपेक्षा की कि वह मंत्रियों की सलाह से काम करेगा और मंत्री विधानमंडल के प्रति उत्तरदायी थे। किंतु प्रांतीय स्वायतता के प्रारंभ किए जाने पर भी 1935 के अधिनियम में केन्द्रीय सरकार का एक विशेष क्षेत्र मे प्रांतों पर नियंत्रण बना रहा।

→ (v) कुछ विषयों में गवर्नर से 'स्वविवेकानुसार' कार्य करने की अपेक्षा थी। ऐसे विषयों में गवर्नर मंत्रिमंडल की सलाह के बिना कार्य करता था। ऐसे कार्य गवर्नर जनरल के और उसके माध्यम से सेक्रेटरी ऑफ स्टेट के नियंत्रण और निर्देश से होते थे।

(vi) कुछ प्रांतों में द्विसदनीय व्यवस्था भी की। ऊपर के सदन को विधान परिषद् कहते थे, उसमें कुछ सदस्य गवर्नर द्वारा मनोनित भी किए जाते थे। निम्न सदन विधानसभा कहलाता था।

(vii) इस अधिनियम की एक विशेषता यह थी कि साम्प्रदायिक तथा अन्य वर्गों को पृथक प्रतिनिधित्व दिया गया।

(viii) अधिनियम के मतदाता मंडल 'साम्प्रदायिक निर्णय' तथा 'पूना समझौते' के अनुसार निर्धारित किए गए। इस प्रकार साधारण मुस्लिम, यूरोपीय, एंग्लो-इंडियन, भारतीय ईसाई और सिख भिन्न-भिन्न मतदाता बनाए गए।

(2.) <u>केन्द्र में द्वैध शासन</u> :- (i) जिस द्वैध शासन को साइमन आयोग ने प्रांतों में अवांछनीय बताया था, वह केन्द्रीय कार्यकारिणी के लिए निश्चित किया गया।

(ii) संघीय विषयों में से रक्षा, विदेशी मामले, धार्मिक मामले, तथा जनजाति क्षेत्र, गवर्नर जनरल के हाथ में सुरक्षित रखे गए, जिनका प्रशासन वह अधिकाधिक तीन कार्यकारी परिषदों की सहायता से चलाएगा, जो वह स्वयं मनोनित करेगा और जो केवल उसी के प्रति उत्तरदायी होंगे।

(iii) शेष संघीय विभाग अधिकाधिक 10 मंत्रियों की सहायता से चलाए जाएंगे और ये मंत्री संघीय विधान मंडल के प्रति उत्तरदायी होंगे।

(iv) गवर्नर जनरल को सलाह देने के लिए 1919 के अधिनियम द्वारा

→

→ उपबंधित पुरानी कार्यकारी परिषद् ही भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम 1947 तक गवर्नर जनरल को सलाह देती रही।

(3.) संघीय विधान:- (i) केन्द्रीय विधानमंडल में दो सदन थे, जो संघीय सभा और राज्य परिषद् से मिलकर बनते थे। संघीय सभा, जिसकी अवधि 5 वर्ष थी, में प्रांतों के 250 सदस्य और रियासतों के अधिकाधिक 125 सदस्य होने थे। अंग्रेजी प्रांतों के सदस्य, प्रांतीय विधान परिषदों द्वारा चुने जाने थे, और रियासतों के सदस्य, राजाओं द्वारा मनोनित किये जाते थे।

(ii) राज्य परिषद् एक स्थायी सभा थी और उसके 1/3 सदस्य प्रत्येक 3 वर्ष के पश्चात् चुने जाते थे। इसमें 260 सदस्य होने थे, जिनमें से 156 प्रांतों के चुने हुए प्रतिनिधि होने थे, जिसे संबद्ध राजाओं को मनोनित करना था।

(4.) केन्द्र और प्रांतों के बीच विधायी शक्तियों का वितरण:-

(i) यद्यपि देशी रियासतें परिसंघ में सम्मिलित नहीं हुई थी। फिर भी भारत-शासन अधिनियम 1935 के परिसंघीय उपबंध केन्द्रीय सरकार और प्रांतों के बीच लागू कर दिए गए।

(ii) 1935 के अधिनियम में विधायी शक्तियों को केन्द्र और प्रांतीय विधानमंडलों के बीच विभाजित किया गया। इस अधिनियम में तीन प्रकार का विभाजन किया गया —

(क) एक परिसंघ सूची थी, जिस पर परिसंघ विधानमंडल को विधान बनाने की अनन्य शक्ति थी। इस सूची में विदेशी मामले, करेंसी और मुद्रा, नौ सेना, सेना और वायु सेना, जनगणना जैसे विषय थे।

(ख) विषयों की एक प्रांतीय सूची थी, जिस पर प्रांतीय विधानमंडलों की अनन्य अधिकारिता थी। उदाहरण के लिए, पुलिस, प्रांतीय लोक सेवा और शिक्षा इत्यादि।